बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 94

मंदी की ओर

जनवरी-मार्च 2019 तिमाही में कॉर्पोरेट आय में वृद्धि का न होना कतई चौंकाने वाला नहीं है क्योंकि इस तिमाही में सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) की वृद्धि दर भी केवल 5.8 फीसदी रही है। उपभोक्ता मांग में कमी ने विनिर्माण वृद्धि को प्रभावित किया है जबकि कम सरकारी निवेश ने अर्थव्यवस्था और उद्योग जगत दोनों को प्रभावित किया है। ब्याज और अवमूल्यन लागत में बढ़ोतरी के कारण चौथी तिमाही में 1,869 गैर वित्तीय और गैर ऊर्जा कंपनियों का शुद्ध मुनाफा सालाना आधार पर 0.1 फीसदी घटा है। यह पिछली छह तिमाहियों की न्यूनतम दर है।

तमाम क्षेत्रों की 2,273 कंपनियों की बात करें तो सालाना आधार पर 39.2 फीसदी की मुनाफा वृद्धि मजबूत लग सकती है लेकिन ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि मार्च 2018 में बैंकों, खासकर निजी कॉर्पोरेट और सरकारी बैंकों के भारी घाटे की वजह से आधार कमजोर था। वित्त वर्ष 2019 की चौथी तिमाही में इनमें से कुछ बैंकों के बेहतर प्रदर्शन ने इस वृद्धि में सहायता की।

मांग पर दबाव का एक और संकेतक घरेलू बाजार केंद्रित कंपनियों से नजर आता है। अप्रत्याशित लाभ या हानि को छोड़ दें तो इन कंपनियों का मूल परिचालन मुनाफा मार्जिन दो अंकों से नीचे आ गया। 17 तिमाहियों में पहली बार ऐसा हुआ। इससे पता चलता है कि लागत पर भी दबाव है। यह प्रादर्श मोटेतौर पर विनिर्माण कंपनियों पर आधारित है।

इनमें धातु, सूचना प्रौद्योगिकी, औषधि, वित्तीय और ऊर्जा क्षेत्र शामिल नहीं हैं। चौथी तिमाही के आंकड़े निजी खपत की मांग में गिरावट का भी संकेत देते हैं। यह बीते दो वर्ष में आर्थिक वृद्धि और कॉर्पोरेट आय का प्रमुख वाहक था। हालांकि वाहन और टिकाऊ उपभोक्ता वस्तुओं की मांग खाद्य एवं प्रसाधन वस्तुओं की मांग की तुलना में ज्यादा कम हुई है। वैश्विक कारोबारी होने के नाते टाटा मोटर्स को छोड़ दिया जाए तो शेष वाहन क्षेत्र की बिक्री चौथी तिमाही में सालाना आधार पर केवल 2 फीसदी बढ़ी। यह बीते तीन वर्ष की सबसे धीमी वृद्धि दर है।

निफ्टी 50 सूचकांक के लिए यह तिमाही अवश्य बेहतर रही। इन 50 कंपनियों के लिए शुद्ध मुनाफा वृद्धि करीब 20 फीसदी रही जो तीन वर्ष में सर्वाधिक है। हालांकि इनकी राजस्व वृद्धि 10 तिमाहियों में न्यूनतम रही। क्षेत्रवार बात करें तो वाहन निर्माता कंपनियों का परिचालन मार्जिन 2018 की चौथी तिमाही के औसत की तुलना में 280 आधार अंक गिरा। जबकि ब्याज, कर, अवमूल्यन और परिशोधन पूर्व समेकित आय लगातार दूसरी तिमाही में गिरी। चौथी तिमाही में उद्योग जगत का शुद्ध मुनाफा सालाना आधार पर 7.4 फीसदी गिरा। यह तीन वर्षों का न्यूनतम स्तर है।

दैनिक उपयोग की उपभोक्ता वस्तुओं की कंपनियों का प्रदर्शन अपेक्षाकृत बेहतर रहा और उनकी शुद्ध बिक्री सालाना आधार पर 10.2 फीसदी बढ़ी। परंतु उनकी मुनाफा वृद्धि चार तिमाहियों में न्यूनतम रही। खुदरा व्यय में कमी के कारण यह क्षेत्र भी आने वाले दिनों में उद्योग जगत के मुनाफे में पहले जैसा योगदान नहीं कर पाएगा। निवेश या पूंजीगत व्यय संबंध क्षेत्र जैसे पूंजीगत वस्तु, विनिर्माण और बुनियादी ढांचा आदि की वृद्धि के आंकड़े अन्य कंपनियों से बेहतर रहे। शेष विनिर्माण कंपनियों के मार्जिन और मुनाफे को नुकसान पहुंचा। जबकि दूरसंचार क्षेत्र लगातार भारी नुकसान में बना रहा। शेयर बाजार अब तक कमजोर तिमाही आंकड़ों से बचा है क्योंकि दरों में कटौती और अर्थव्यवस्था के लिए प्रोत्साहन का अनुमान है। तब तक अधिकांश विश्लेषक आगामी वित्त वर्ष में आय के गिरावट का जोखिम ही देख रहे हैं।

विनय सिन्हा

मोदी की दूसरी पारी में अहम 'एक चीज'

नरेंद्र मोदी जैसा दिग्गज राजनीतिक नेता अपने कार्यकाल को असाधारण आर्थिक सफलता दिलाने के लिए क्या कदम उठा सकता है? मौजूद विकल्पों पर रोशनी डाल रहे हैं **देवाशिष बसु**

गत 23 मई की दोपहर में ही यह साफ हो गया था कि नरेंद्र मोदी की भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) एक बड़ी चुनावी जीत की ओर अग्रसर है। उसके बाद से ही पत्रकारों और संपादकों के ईमेल बॉक्स में उद्योगपतियों, उद्योग संगठनों एवं वित्तीय विशेषज्ञों के संदेशों की भरमार हो गई है। सरकार की तरफ से तत्काल उठाए जाने वाले इन कदमों की सूची काफी लंबी है। पिछले कई दशकों में कई समस्याएं खड़ी हो चुकी हैं। भाजपा को मिले जबरदस्त जनादेश के बाद उसे मत देने वाले व्यक्ति से लेकर आर्थिक टिप्पणीकार भी आगे किए जाने वाले कार्यों की सूची दे रहे हैं।

हालांकि इन सूचियों का कोई मतलब नहीं है। मोदी शायद उन्हें पढ़ते नहीं हैं, उन्हें किसी की सलाह की जरूरत भी नहीं है, मेरे जैसे स्तंभ लेखकों की तो कतई नहीं। अच्छा हो या बुरा, सही हो या गलत, वह अपने फैसले खुद करते हैं और उन पर डटे रहते हैं। लेकिन उनकी राजनीतिक जीतें जहां अपने-आप में पूर्ण रही हैं, वहीं आर्थिक मोर्चे पर उनकी जीतों को लेकर बहस हो सकती है, खासकर यह देखते हुए कि सरकार ने अपने प्रदर्शन को बेहतर दिखाने के लिए लगातार आंकड़ों में फेरबदल किए हैं। हो सकता है कि भाजपा कार्यकर्ताओं के भारी शोरशराबे और आम नागरिक के अंध आशावाद के मौजूदा परिवेश में इसे कुछ समय के लिए भुला दिया जाए।

मोदी जैसा दिग्गज नेता अपने शासनकाल में असाधारण आर्थिक कामयाबी हासिल करने के लिए क्या कदम उठा सकता है? गैरी डब्ल्यू केलर और जेय पपासन की चर्चित किताब 'दी वन थिंग: द सरप्राइजिंग्ली सिंपल ट्रुथ बिहाइंड एक्सट्राऑर्डिनरी रिजल्ट्स' में इस सवाल का जवाब मिल सकता है। लेखक-द्वय यह सरल सवाल पूछने की सलाह देते हैं कि 'वह कौन सी एक चीज है जिसे अंजाम देने के बाद बाकी कुछ भी करना अधिक आसान हो जाता है?' अगर भारत को अपने करोड़ों नागरिकों को गरीबी से बाहर निकालने का मुख्य लक्ष्य तेजी से हासिल करना है तो वह कम मात्रा में मौजूद पूंजी को व्यर्थ नहीं गंवा सकता है। भारत को पूंजी के कारगर आवंटन की जरूरत है जो कि अर्थव्यवस्था की जीवनशक्ति होती है।

मोटे तौर पर भारत में तीन तरह की इकाइयां पूंजी का इस्तेमाल करती हैं। पहला, केंद्र एवं राज्य सरकारें, दूसरा, सरकार के नियंत्रण वाले वाणिज्यिक संगठन और तीसरा, निजी क्षेत्र। जो भी पूंजी का इस्तेमाल करे, यह बहस से परे है कि पूंजी का इस्तेमाल हरसंभव लाभकारी तरीके से होना चाहिए। भारत में पूंजी खर्च होने के तरीके के बारे में बुनियादी समझ रखने वाला कोई भी व्यक्ति यह बता देगा कि पहली इकाई बड़े पैमाने पर पूंजी का नुकसान करती है।

आज से 33 साल पहले राजीव गांधी ने इस अवसर का फायदा उठाने की गरज से शून्य-आधारित बजट (जेडबीबी) लाने की पहल की थी। इस पहल के तहत बजट संबंधी हरेक गतिविधि हरेक साल शून्य आधार से ही शुरू होती है। इसका मतलब है कि हरेक व्यय को हर साल न्यायोचित ठहराना होगा और एक साल पहले किए गए खर्च से उसका कोई नाता नहीं होगा। जहां परंपरागत बजट निर्माण में गत वर्ष की तुलना में हुई क्रमिक वृद्धि का उल्लेख होने के साथ ही अवशिष्ट का आकलन भी किया जाता है, वहीं जेडबीबी व्ययकर्ताओं पर हर बार यह दबाव डालता है कि खर्चों को न्यायोचित ठहराया जाए और लागत कम की जाए। इसे एक उदाहरण से समझते हैं। सांसद क्षेत्र विकास निधि के तहत हरेक साल अरबों रुपये आवंटित किए जाते हैं। सांसद इस राशि का थोड़ा सा हिस्सा ही खर्च करते हैं और उन्हें बची हुई राशि अगले साल ले जाने की भी अनुमति होती है। लेकिन जेडबीबी में अपनी राशि खर्च नहीं करने वाले सांसदों को रकम नहीं आवंटित की जाएगी और अधिक कारगर ढंग से या अधिक जरूरत वाले क्षेत्रों में वह राशि खर्च की जाएगी। जब सैकड़ों अरब रुपये इकट्ठा हो जाएंगे तो कहीं अधिक फायदे उठाए जा सकेंगे। तमाम विभागों के बीच फालतू खर्चों और नदारद कर्मचारियों के बारे में भी पता कर सकते हैं।

पूंजी बरबाद करने वालों में दूसरा स्थान सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों (पीएसयू) का है। हमें नहीं मालूम है कि मोदी इनके बारे में क्या करना चाहते हैं क्योंकि उनके कार्यकाल में पीएसयू वे तमाम काम कर रहे हैं जिन्हें निजी क्षेत्र की कंपनियां बेहतर ढंग से अंजाम दे रही हैं। यहां तक कि वित्तीय एवं डिजिटल ढांचे जैसे तेजी से बढ़ते क्षेत्रों में भी यह हो रहा है। इसके अलावा होटल, एयरलाइन, टेलीफोन, इस्पात, खाद, इंजीनियरिंग और फोटो फिल्म तक में पीएसयू की खराब हालत को दुरुस्त करने की कोई कोशिश हुई है। राज्यों में भी सक्रिय सैकड़ों पीएसयू की हालत ऐसी ही है। पूंजी आवंटनकर्ता होने के नाते सरकार और पीएसयू दोनों को ही पैसे की बरबादी रोकने के लिए कोई प्रोत्साहन नहीं होता है। अगर इसे अलग तरीके से देखें तो इसमें उनका कुछ भी दांव पर नहीं होता है। उन्हें इस खेल से बाहर करने की जरूरत है क्योंकि वे अरबों रुपये बरबाद कर रहे हैं जिसे उपभोक्ताओं और कारोबारों को मिलना चाहिए।

इसके विपरीत, पूंजी आवंटनकर्ताओं की तीसरी किस्म निजी क्षेत्र की उन कंपनियों की होती है जिनका इस खेल में बहुत कुछ दांव पर माना जाता है। चाहे वह टाटा जैसी विशाल कंपनी हो या कोई छोटी कंपनी। अगर उनका इस खेल में दांव नहीं लगा होता है तो इसकी वजह यह है कि राज्य या उसके तमाम अंग (नेता, बाबू और सार्वजनिक बैंक) उन्हें पीएसयू की ही तरह गैरजिम्मेदाराना ढंग से काम करने देते हैं जिसे दोस्ताना पूंजीवाद के रूप में पेश किया जाता है। अगर निजी क्षेत्र को निष्पक्ष ढंग से प्रतिस्पर्द्धा करने की आजादी दी जाती है तो वह पहले दो पूंजी आवंटनकर्ताओं की तुलना में कहीं बेहतर साबित होंगे।

अगर एक सरकार कारगर ढंग से पूंजी आवंटन प्राथमिकता तय करती है तो उसका मतलब होगा एक छोटा राज्य, करों में कमी, खर्च योग्य आय में बढ़त और वस्तुओं एवं सेवाओं का सस्ता होना। फिर राज्य अपनी पूंजी को उन इलाकों में आवंटित कर सकता है जो इस संरचनात्मक बदलाव में मदद करते हैं। जीत का जश्न खत्म होने के बाद क्या भाजपा अपने राजनीतिक जनादेश को प्रभावी संरचनात्मक बदलाव लाने वाले जनादेश में बदलेगी? यह 'एक चीज' बाकी प्रयासों को काफी हद तक गैरजरूरी बना देगी।

(लेखक वेबसाइट मनीलाइफ डॉट इन के संपादक हैं)

समावेशी और बहुलवादी बना रहेगा हमारा भारत

जिंदगीनामा

कनिका दत्ता

लुटियन जोन में रहने वाले उदारवादी और विभिन्न 'सिकुलर' विश्लेषक चुनाव नतीजों के सामने आने के बाद एकदम स्तब्ध हैं। चुनाव नतीजों में नरेंद्र मोदी की भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) को लोकसभा में अप्रत्याशित बहुमत मिला। तब से बुर्जुआ बौद्धिक वर्ग की बहस चुनाव अभियान की उन्मादी और सांप्रदायिक विषयवस्तु के इर्दगिर्द घूम रही है। कहा जा रहा है कि इन सब ने मिलकर मोदी सरकार के 2014 के अधूरे रह गए वादों की कमियों को ढक दिया। तो क्या हमें बहुलतावादी, समावेशी भारत के अंत की घोषणा कर देनी चाहिए? बीते पांच वर्षों पर नजर डालें तो पता चलता है कि क्यों इस सवाल का जवाब न है।

मोदी के आलोचकों ने अकेले दम पर हासिल की गई इस जीत का श्रेय उनके करिश्मे, पैसे की ताकत, युवा शक्ति के प्रदर्शन और व्यापक राष्ट्रीय प्रसार क्षमता को दिया है। इन सभी मोर्चों पर उन्हें 2014 की तुलना में बढ़त हासिल हुई है। हकीकत में मोदी के अखिल भारतीय रेडियो टॉक शो मन की बात को भी एक सक्षम चुनावी उपाय माना गया। इसके बावजूद बीते पांच साल में लोकसभा उपचुनावों में उनकी पार्टी को आठ सीटों पर हार का सामना करना पड़ा तथा कई अहम राज्यों के चुनाव भी वह हारी। तब से अब तक हुए 20 के करीब विधानसभा चुनावों में जितनी बार भाजपा जीती है, करीब उतनी ही बार गैर भाजपा दलों की भी जीत हुई है। हालांकि सत्ता की राजनीति की अनिवार्यताओं ने उनमें से दो को भगवा दल के साथ जुड़ने पर मजबूर किया और पार्टी ने पूर्वोत्तर में अपना खाता खोला।

प्रमाण के लिए हम दिल्ली और बिहार के विधानसभा चुनाव (2015), ओडिशा (2014 और 2019), पश्चिम बंगाल (2016) और छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश और राजस्थान के 2018 के विधानसभा चुनावों को याद कर सकते हैं। इसके अलावा उत्तर प्रदेश में गोरखपुर और फूलपुर के लोकसभा उपचुनाव भी।

उस वक्त भी हिंदुत्व की लहर आज से कमजोर नहीं थी लेकिन उक्त तमाम चुनाव परिणाम रोजी-रोटी के मसलों पर लड़े गए। दिल्ली में चुनाव शहरी गरीबों के लिए बिजली, पानी, स्कूल और स्वास्थ्य के मुद्दे पर लड़ा गया, बिहार और ओडिशा में विकास के मुद्दे पर, पश्चिम बंगाल में भूमि अधिकारों की रक्षा के लिए (बाद में ममता बनर्जी ने सांप्रदायिक तुष्टीकरण की राह अपनाई) और छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश और राजस्थान में किसानों के असंतोष के मुद्दे पर।

मोदी को 2014 में मिला बहुमत जातीय राजनीति से परे रोजगार और विकास के मुद्दे पर था। उन्होंने बहुत ऊर्जा के साथ प्रचार किया था। वह लालफीताशाही और भ्रष्टाचार मुक्त भारत की बात करते, सक्षम प्रशासन, तेज अर्थव्यवस्था और ढेरों रोजगार की बात किया करते थे। ये सारी बातें तत्कालीन सरकार के प्रदर्शन से उलट थीं। इन बातों ने कई मतदाताओं को भाजपा को वोट देने के लिए प्रोत्साहित किया।

विकास का ऊर्जावान, विश्वसनीय और प्रतिस्पर्धी दृष्टि जो अनिवार्य तौर पर धर्म और राष्ट्रवाद पर आधारित न हो, उसका मतदाताओं को आकर्षित करना स्वाभाविक था।

अब यह भुलाना आसान है कि सन 2019 के आरंभ में आर्थिक मोर्चे पर मोदी के कमजोर प्रदर्शन के कारण लगने लगा था कि वह सत्ता में वापसी तो करेंगे लेकिन निहायत घटी हुई सीटों के साथ। कांग्रेस मतदाताओं को देशव्यापी स्तर पर बेहतर विकल्प देने में नाकाम रही तो इसके लिए उसके प्रचार अभियान की कमजोरी भी वजह रही जो अमित शाह और नरेंद्र मोदी की तरह स्पष्ट संदेश देने में नाकाम रही।

आम आदमी की सोच प्रक्रिया से राहुल गांधी की दूरी के कारण वह ऐसे मसलों पर केंद्रित रहे जो व्यापक तौर पर बेमानी साबित हुए। मोदी ने राफेल सौदे में पैसे बनाए या नहीं यह बात उस समय बेमानी है जबकि लोग आजीविका के लिए परेशान हैं। भाजपा के घृणा अभियान के उलट राहुल गांधी ने प्रेम का जो संदेश प्रसारित किया वह बेतुका साबित हुआ। कांग्रेस द्वारा भाजपा के सत्ता में आने पर मुस्लिमों की बड़े पैमाने पर हत्या होने और मंदिरों की यात्राओं ने मतदाताओं को भ्रमित कर दिया। कांग्रेस की आय समर्थन योजना न्याय के पीछे की समझ पर बात की जा सकती है लेकिन यह योजना बहुत देर से आई और इसका ठीक से प्रचार नहीं हो सका। विडंबना यह है कि कांग्रेस के पास जमीनी संगठन और राज्यों में सक्षम क्षत्रप भी हैं लेकिन राहुल गांधी ने उनको उचित छूट नहीं दी।

इसके विपरीत, उम्र में राहुल गांधी से दो दशक बड़े मोदी और शाह ने वह किया जो गांधी नहीं कर सके। उन्होंने लोगों को जोड़ा और एक ऐसी दलील तैयार की जो बुरे दौर में उनकी पार्टी के काम आई। उन्होंने पाकिस्तान, इस्लामिक आतंकवादियों आदि का भय उत्पन्न किया। जम्मू कश्मीर में एक दशक की अपेक्षाकृत शांति के बाद ये सारे मुद्दे पुनर्जीवित हो चुके हैं। जाहिर है जिस समय अर्थव्यवस्था ठहरी हुई और विदेशी निवेशक अन्य ठिकाने खोज रहे हों तो ये मुद्दे काम आएंगे। मोदी की आलोचना करने वाले उनकी तुलना इंदिरा गांधी से करते हुए कहते हैं कि वह अधिनायकवादी हैं और संस्थानों और संवैधानिक मूल्यों की इज्जत नहीं करते। पश्चिम बंगाल में नाकारा साबित हुए वाम मोर्चे की सरकार के साथ भी मोदी सरकार की समानताएं चौंकाने वाली हैं। जिस तरह जमीन के पुनर्वितरण ने वाम मोर्चे को तीन दशक तक सत्ता में बनाए रखा, उसी तरह मोदी की शुरुआती सफलताओं मसलन जन धन और उज्ज्वला योजना ने गुजरात के बाहर आम लोगों को मोदी की क्षमताओं से वाकिफ कराया। वाम मोर्चे की औद्योगिक नीतियों की नाकामी ने वाम मोर्चे को काडर उपलब्ध कराया था, बेरोजगारी ने मोदी को बड़ी तादाद में राजनैतिक सिपाही मुहैया कराए। हमेशा प्रचार के मिजाज में रहने वाले मोदी 2020 के विभिन्न चुनावों के लिए नीतियां बना रहे हैं। उनके धर्मनिरपेक्ष विरोधियों के लिए जल्द से जल्द एकजुट होने का वक्त आ चुका है।

कानाफूसी

संकट को न्योता?

क्या छत्तीसगढ़ की कांग्रेस सरकार खुद ही अपने आप को अस्थिर कर रही है? कुछ दिन पहले प्रदेश के मुख्यमंत्री भूपेश बघेल ने घोषणा की कि उन्होंने राज्य के महाधिवक्ता कनक तिवारी का इस्तीफा स्वीकार कर लिया है। दिलचस्प यह है कि उन्होंने बिना समय गंवाए सतीश चंद्र मिश्रा को नया महाधिवक्ता भी नियुक्त कर दिया। उधर तिवारी ने आरोप लगाया कि राज्य सरकार ने उन्हें इसलिए पद से हटा दिया क्योंकि वह मंत्रियों के कामकाज के तरीके पर आपत्ति जताते थे। उन्होंने राज्य सरकार को यह चुनौती भी दी कि अगर उन्होंने इस्तीफा दिया है तो सरकार उनका त्यागपत्र सार्वजनिक करे। उधर विपक्षी दल भारतीय जनता पार्टी और जनता कांग्रेस छत्तीसगढ़ भी इस मौके को गंवाना नहीं चाह रहे। उन्होंने सरकार पर आरोप लगाया है कि वह संवैधानिक संकट उत्पन्न कर रही है।

जागरूक मंत्री

मंगलवार को स्वास्थ्य राज्य मंत्री अश्विनी चौबे ने अपने घर से उद्योग भवन तक की यात्रा दिल्ली मेट्रो में बैठ कर की। मेट्रो स्टेशन से अपने कार्यालय तक वह पैदल गए। इतना ही नहीं मंत्रालय भवन के बाहर उन्होंने कुछ पौधे भी लगाए। इससे एक दिन पहले चिकित्सा के क्षेत्र से राजनीति में आए भाजपा के ही एक अन्य मंत्री हर्षवर्धन ने कार्यालय आने के लिए साइकिल का इस्तेमाल किया था। बतौर केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्री पहले ही दिन साइकिल से पहुंचे हर्षवर्धन ने कहा कि आयुष्मान भारत-प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना का क्रियान्वयन करना उनकी प्राथमिकता होगी।

आपका पक्ष

जल संकट और पर्यावरण दिवस

पर्यावरण से जुड़े खतरों के प्रति सचेत करने, पर्यावरण की रक्षा करने एवं उसे बचाने के उद्देश्य से हर वर्ष 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस मनाया जाता है। विभिन्न सरकारों एवं लोगों ने पर्यावरण को बचाने के लिए कई तरीके अपनाए हैं। लेकिन कुछ खतरे ऐसे हैं जिनसे बचने की संभावना जटिल बताई जा रही है। इसमें प्रमुख समस्या जल प्रदूषण एवं पीने के स्वच्छ जल की निरंतर घटती मात्रा है। पृथ्वी पर जीवन के लिए जल सबसे जरूरी चीज है। जल प्रदूषण एवं पीने लायक जल की घटती मात्रा दुनिया के समक्ष एक बड़ी चुनौती बन चुकी है। बढ़ती जनसंख्या के कारण औद्योगीकरण और शहरीकरण बढ़ रहा है जो बड़े और छोटे पानी के स्रोतों में ढेर सारा कचरा छोड़ रहे हैं। इससे पानी दूषित हो रहा है। पशु और पौधों की बहुत सारी प्रजातियां जल प्रदूषण के कारण खत्म हो चुकी हैं। जल प्रदूषण एक वैश्विक समस्या बन गई है। यह विकसित और विकासशील देशों को प्रभावित कर रही है। राष्ट्रीय पर्यावरण अभियांत्रिकी अनुसंधान संस्थान के अनुसार नदी का 70 प्रतिशत जल प्रदूषित हो गया है। भारत की मुख्य नदियां जैसे गंगा, ब्रह्मपुत्र, सिंधु और यमुना प्रभावित हो चुकी हैं। भारत का भविष्य कई रूपों में इन नदियों से जुड़ा हुआ है। सरकार की तमाम कोशिशों के बावजूद शहर के दूषित जल का केवल 10 प्रतिशत पानी ही शोधित हो पा रहा है। जल प्रदूषण से मानव के साथ जलीय जीव जंतु और पशु-पक्षी भी इस समस्या से जूझ रहे हैं। मुंबई जैसे शहर में प्रतिदिन 210 करोड़ लीटर गंदा पानी निकलता है। फिलहाल अधिकांश पानी समुद्र में जाता है। लेकिन अगर इसे शोधित करके हजारों हेक्टेयर खेतों की सिंचाई हो सकती है। कुछ साल पहले सिंगापुर के प्रधानमंत्री ने वहां की एक सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट के साफ किए गए पानी को पीते हुए यह दिखाया कि वह पानी कितना शुद्ध है। भारत में अब भी पर्याप्त पीने का पानी है अगर हम संसाधनों का इस्तेमाल विवेकपूर्वक करें।

पर्यावरण को बचाने के लिए 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस मनाया जाता है

दुर्गेश शर्मा, गोरखपुर

अमेरिका द्वारा जीएसपी हटाना

अमेरिका ने भारत के निर्यात में कुछ विशेष वस्तुओं पर व्यापारिक प्रशुल्क में छूट के जीएसपी दर्जे को खत्म कर दिया है। जीएसपी अमेरिका द्वारा विकासशील देशों के व्यापारिक प्रशुल्क में छूट देने के लिए प्राथमिकताओं की सामान्यीकृत प्रणाली है। इसके तहत अमेरिका विकासशील देशों की आर्थिक तरक्की के लिए नि:शुल्क वस्तुओं का आयात करता है। जीएसपी के तहत भारत अमेरिका को 5.6 अरब डॉलर अर्थात करीब चालीस हजार करोड़ रुपये का सालाना निर्यात करता है। अमेरिका ने व्यापार अधिनियम 1974 के तहत एक जनवरी 1976 को जीएसपी का गठन किया था। भारतीय अंतरराष्ट्रीय व्यापारिक वार्ताओं की असफलता के पीछे एक स्वतंत्र व्यापार वार्ता एजेंसी का ना होना है। अमेरिकी एजेंसी यूएसटीआर व्यापार वार्ताओं के संदर्भ में स्वतंत्र रूप से कार्य करती है, लेकिन भारत में केवल वाणिज्य मंत्रालय है। इसलिए समय आ गया है कि अब भारत सरकार को भी एक ऐसी एजेंसी का गठन करना चाहिए जो अंतरराष्ट्रीय व्यापार वार्ताओं में भूमिका निभा सकें।

अश्विनी शर्मा, वाराणसी

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।